TEXT CUT WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180351

UNIVERSAL
LIBRARY

# नीरजा

लेखिका

श्रीमती महादेवी वर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९४५

मूल्य १।-)

Printed and Published by K. Mittra at
The Indian Press, Ltd. Allahabad

जिनके

मधुर कण्ठ से निकले हुए मीरा के पद

प्रभाती और लोरी के समान

बचपन में

मुझे जगाते सुलाते रहे हैं

उन्हीं

जननी की गीता की एक अकिञ्चन

**भेंट**

# वक्तव्य

खड़ी बोली का प्रचार हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए, मुश्किल से २०-२५ वर्ष बीते होंगे। इस अल्प अवधि मे ही हिन्दी-कविता ने जो उन्नति की है, वह हमारे साहित्य के लिए परम हर्ष का विषय है। बीसवी शताब्दी के अर्द्धांश के भी पूर्व, वर्तमान हिन्दी-कविता ने प्रगति के पथ पर अपना जो नूतन प्रथम चरण बढ़ाया है, उसकी सफलता को देखते हुए हमे पूर्ण आशा होती है कि यह काल हमारे साहित्य के भावी इतिहास मे बड़े गौरव की दृष्टि से देखा जायगा।

श्रीमती महादेवी वर्म्मा का स्थान हिन्दी की आधुनिक कवियित्रियो मे बहुत ऊँचा है। इतना ही नहीं; वे हिन्दी के उन प्रमुख कवियो में से है जिनकी प्रतिभा से हमारे साहित्य के एक ऐसे युग का निर्म्माण हो रहा है, जो आज के ही नहीं, भविष्य के सहृदयो को भी आप्यायित करता रहेगा। उन कवियो की पंक्ति मे श्रीमती वर्म्मा का एक निश्चित स्थान है।

श्रीमती वर्म्मा हिन्दी-कविता के इस वर्तमान युग की वेदना-प्रधान कवियित्री है। उनकी काव्य-वेदना आध्यात्मिक है। उसमे आत्मा का परमात्मा के प्रति आकुल प्रणय-निवेदन है। कवि की आत्मा, मानो इस विश्व मे बिछुड़ी हुई प्रेयसी की भाँति अपने प्रियतम का स्मरण करती

है। उसकी दृष्टि में, विश्व की सम्पूर्ण प्राकृतिक शोभा-सुषमा एक अनन्त अलौकिक चिरसुन्दर की छायामात्र है। इस प्रतिविम्ब जगत को देखकर कवि का हृदय, उसके सलोने विम्ब के लिए ललक उठा है। मीरा ने जिस प्रकार उस परम पुरुष की उपासना सगुण रूप में की थी, उसी प्रकार महादेवी जी ने अपनी भावनाओं में उसकी आराधना निर्गुण रूप में की है। उसी एक का स्मरण, चिन्तन एवं उसके तादात्म्य होने की उत्कण्ठा, महादेवी जी की कविताओं के उपादान है। उनकी 'नीहार' में हम इस उपासना-भाव का परिचय विशेष रूप से पाते है। 'रश्मि' में इस भाव के साथ ही हमें उनके उपास्य का दार्शनिक 'दर्शन' भी मिलता है।

प्रस्तुत गीतिकाव्य 'नीरजा' में 'नीहार' का उपासना-भाव और भी सुस्पष्टता और तन्मयता से जाग्रत हो उठा है। इसमें अपने उपास्य के लिए केवल आत्मा की करुण अधीरता ही नहीं, अपितु, हृदय की विह्वल प्रसन्नता भी मिश्रित है। 'नीरजा' यदि अश्रुमुखी वेदना के कणों से भीगी हुई है तो साथ ही आत्मानन्द के मधु से मधुर भी है। मानो, कवि की वेदना, कवि की करुणा, अपने उपास्य के चरणस्पर्श से पूत होकर आकाश-गङ्गा की भाँति इस छायामय जग को सींच देने में ही अपनी सार्थकता समझ रही है।

'नीरजा' के गीतों में सगीत का बहुत सुन्दर प्रवाह है। हृदय के अमूर्त भावों को भी, नव-नव उपमाओं एवं रूपकों-द्वारा कवि ने बडी सुघरता से एक-एक सजीव स्वरूप प्रदान कर दिया है। भाषा सुन्दर,

कोमल, मधुर और सुस्निग्ध है। इसके अनेक गीत अपनी मार्मिकता के कारण सहज ही हृदयङ्गम हो जाते हैं।

श्रीमती वर्म्मा की काव्य-शैली मे अब तक अनेक परिवर्तन हो चुके है। और, यह परिवर्तन ही उनके विकास का सूचक है। अपने प्रारम्भिक कवि-जीवन मे महादेवी जी ने सामाजिक और राष्ट्रीय कवितायें भी लिखी थी, परन्तु उनकी प्रतिभा वहीं तक सीमित नहीं रही। फलतः 'नीहार' और 'रश्मि'-द्वारा ही वे अपने व्यापक कवि रूप मे हिंदी ससार मे प्रतिष्ठित हुईं। अब इस 'नीरजा' मे उनकी प्रतिभा और भी भव्य रूप मे प्रफुल्ल हुई है। इसमे भाषा, भाव और शैली, सभी दृष्टियों से, उनकी प्रतिभा का उत्कृष्ट विकास हुआ है। हमे पूर्ण आशा है कि उनकी यह नूतन कला-कृति उनके यश को हमारे साहित्य मे और भी समुज्ज्वल कर देगी और साहित्य रसिकों के अपार प्रेम की वस्तु बनेगी।

काशी,<br>
आश्विन ९१

**कृष्णदास**

प्रिय इन नयनों का अश्रु-नीर !
दुख से आविल सुख से पंकिल;
बुद्‌बुद् से स्वप्नों से फेनिल;
बहता है युग युग से अधीर !

## नी र जा

जीवनपथ का दुर्गमतम तल;
अपनी गति से कर सजल सरल;
शीतल करता युग तृषित तीर !

इसमें उपजा यह नीरज सित;
कोमल कोमल लज्जित मीलित;
सौरभ सी लेकर मधुर पीर !

इसमें न पंक का चिह्न शेष,
इसमें न ठहरता सलिल-लेश,
इसको न जगाती मधुप भीर

तेरे करुणा-कण से विलसित;
हो तेरी चितवन से विकसित,
छू तेरी श्वासों का समीर !

२

धीरे धीरे उतर क्षितिज से
आ वसन्त-रजनी !

तारकमय नव वेणीबन्धन;
शीश फूल कर शशि का नूतन;
रश्मिवलय सित घन-अवगुण्ठन;
मुक्ताहल अभिराम बिछा दे
चितवन से अपनी !
पुलकती आ वसन्त-रजनी !

मर्मर की सुमधुर नूपुरध्वनि;
अलि-गुञ्जित पद्मों की किंकिणि;
भर पदगति में अलस तरंगिणि;
तरल रजत की धार बहा दे
मृदु स्मित से सजनी !
विहँसती आ वसन्त-रजनी !

पुलकित स्वप्नों की रोमावलि;
कर में हो स्मृतियों की अञ्जलि;
मलयानिल का चल दुकूल अलि !
घिर छाया सी श्याम, विश्व को
आ अभिसार बनी !
सकुचती आ वसन्त-रजनी !

सिहर सिहर उठता सरिता-उर;
खुल खुल पड़ते सुमन सुधा-भर;
मचल मचल आते पल फिर फिर;
सुन प्रिय की पदचाप हो गई
पुलकित यह अवनी !
सिहरती आ वसन्त-रजनी !

३

पुलक पुलक उर, सिहर सिहर तन.
आज नयन आते क्यों भर भर ?

सकुच सलज खिलती शेफाली;
अलस मौलश्री डाली डाली;
बुनते नव प्रवाल कुञ्जों में;
रजत श्याम तारों से जाली;

शिथिल मधु-पवन, गिन-गिन मधु-कण,
हरसिंगार झरते हैं झर झर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

पिक की मधुमय वंशी बोली;
नाच उठी सुन अलिनी भोली;
अरुण सजल पाटल बरसाता
तम पर मृदु पराग की रोली;

मृदुल अंक धर, दर्पण सा सर;
आज रही निशि दृग इन्दीवर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

आँसू बन बन तारक आते;
सुमन हृदय में सेज बिछाते;
कम्पित वानीरों के वन भी
रह रह करुण विहाग सुनाते;

निद्रा उन्मन, कर कर विचरण,
लौट रही सपने संचित कर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

जीवन जल-कण से निर्मित सा;
चाह इन्द्रधनु से चित्रित सा;
सजल मेघ सा धूमिल है जग
चिर नूतन सकरुण पुलकित सा;

तुम विद्युत् बन, आओ पाहुन !
मेरी पलकों में पग धर धर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

४

तुम्हें बाँध पाती सपने में !
तो चिरजीवन-प्यास बुझा
लेती उस छोटे क्षण अपने में !

पावस-घन सी उमड़ बिखरती;
शरद निशा सी नीरव घिरती;

धो लेती जग का विषाद
ढुलते लघु आँसू-कण अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

मधुर राग बन विश्व सुलाता;
सौरभ बन कण कण बस जाती;

भरती मै संसृति का क्रन्दन
हँस जर्जर जीवन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

सबकी सीमा बन, सागर सी;
हो असीम आलोक-लहर सी;

तारोंमय आकाश छिपा
रखती चंचल तारक अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

शाप मुझे बन जाता वर सा;
पतझर मधु का मास अजर सा;

रचती कितने स्वर्ग, एक
लघु प्राणों के स्पन्दन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

साँसें कहतीं अमर कहानी;
पल पल बनता अमिट निशानी;

प्रिय ! मै लेती बाँध मुक्ति
सौ सौ लघुतम बन्धन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

५

आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

शिथिल शिथिल तन थकित हुए कर;
स्पन्दन भी भूला जाता उर;

मधुर कसक सा आज हृदय में
आन समाया कौन ?

आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

झुकती आतीं पलकें निश्चल;
चित्रित निद्रित से तारक चल;
सेाता पारावार दृगों में
भर भर लाया कौन ?

आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

बाहर घन-तम, भीतर दुख-तम;
नभ में विद्युत् तुझमें प्रियतम;
जीवन पावस-रात बनाने
सुधि बन छाया कौन ?

आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

६

शृङ्गार कर ले री सजनि

नव क्षीरनिधि की उर्मियों से
रजत झीने मेघ सित;
मृदु फेनमय मुक्तावली से
तैरते तारक अमित;

सखि ! सिहर उठती रश्मियों का
पहिन अवगुण्ठन अवनि !

हिमस्नात कलियों पर जलाये
जुगनुओं ने दीप से;
ले मधुपराग समीर ने
वनपथ दिये हैं लीप से;

गाती कमल के कक्ष में
मधु-गीत मतवाली अलिनि !

तू स्वप्नसुमनों से सजा तन
विरह का उपहार ले;
अगणित युगों की प्यास का
अब नयन अजन सार ले !

अलि ! मिलन-गीत बने मनोरम
नूपुरों की मदिर ध्वनि !

इस पुलिन के अणु आज हैं
भूली हुई पहचान से;
आते चले जाते निमिष
मनुहार से, वरदान से;

अज्ञात पथ, है दूर प्रिय चल
भीगती मधु की रजनि !

७

कौन तुम मेरे हृदय में ?

कौन मेरी कसक में नित
मधुरता भरता अलक्षित ?
कौन प्यासे लोचनों में
घुमड़ घिर झरता अपरिचित ?

स्वर्णस्वप्नों का चितेरा
नींद के सूने निलय में !
कौन तुम मेरे हृदय में ?

अनुसरण निश्वास मेरे
कर रहे किसका निरन्तर ?
चूमने पदचिह्न किसके
लौटते यह श्वास फिर फिर ?

कौन बन्दी कर मुझे अब
बँध गया अपनी विजय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

एक करुण अभाव में चिर—
तृप्ति का संसार संचित;
एक लघु क्षण दे रहा
निर्वाण के वरदान शत शत;

पा लिया मैंने किसे इस
वेदना के मधुर क्रय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

गूँजता उर में न जाने
दूर के संगीत सा क्या !
आज खो निज को मुझे
खोया मिला, विपरीत सा क्या !

क्या नहा आई विरह-निशि
मिलनमधु-दिन के उदय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

तिमिरपारावार में
आलोकप्रतिमा है अकम्पित;
आज ज्वाला से बरसता
क्यों मधुर घनसार सुरभित ?

सुन रही हूँ एक ही
झंकार जीवन में प्रलय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

मूक सुख दुख कर रहे
मेरा नया शृङ्गार सा क्या ?
भूम गर्वित स्वर्ग देता—
नत धरा को प्यार सा क्या

आज पुलकित सृष्टि क्या
करने चली अभिसार लय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

८

ओ पागल संसार !

माँग न तू हे शीतल तममय !
जलने का उपहार !

करता दीपशिखा का चुम्बन;
पल में ज्वाला का उन्मीलन;

छूते ही करना होगा
जल मिटने का व्यापार !
ओ पागल संसार !

दीपक जल देता प्रकाश भर,
दीपक को छू जल जाता घर,

जलने दे एकाकी मत आ
हो जावेगा क्षार!
ओ पागल संसार!

जलना ही प्रकाश उसमें सुख;
बुझना ही तम है तम में दुख;

तुझमें चिर दुख, मुझमें चिर सुख
कैसे होगा प्यार!
ओ पागल संसार!

शलभ अन्य की ज्वाला से मिल,
झुलस कहाँ हो पाया उज्ज्वल

कब कर पाया वह लघु तन से
नव आलोक-प्रसार!
ओ पागल संसार!

अपना जीवन-दीप मृदुलतर,
वर्ती कर निज स्नेहसिक्त उर,

फिर जो जल पावे हँस हँस कर
हो आभा साकार!
ओ पागल संसार!

९

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !
वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास,
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात,
जीवन विरह का जलजात !

आँसुओं का कोष उर, दृग अश्रु की टकसाल;
तरल जल-कण से बने घन सा क्षणिक मृदु गात !
जीवन विरह का जलजात !

अश्रु से मधुकण लुटाता आ यहाँ मधुमास;
अश्रु ही की हाट बन आती करुण बरसात
जीवन विरह का जलजात !

काल इसको दे गया पल-आँसुओं का हार,
पूछता इसकी कथा निश्वास ही में बात !
जीवन विरह का जलजात !

जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आज;
खिल उठे निरुपम तुम्हारी देख स्मित का प्रात !
जीवन विरह का जलजात !

१०

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ !

नींद थी मेरी अचल निस्पन्द कण कण में,
प्रथम जागृति थी जगत के प्रथम स्पन्दन में;
प्रलय मे मेरा पता पदचिह्न जीवन मे,
शाप हूँ जो बन गया वरदान बन्धन में;

कूल भी हूँ कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ !

नयन में जिसके जलद वह तृषित चातक हूँ;
शलभ जिसके प्राण में वह निठुर दीपक हूँ;
फूल को उर में छिपाये विकल बुलबुल हूँ;
एक हो कर दूर तन से छाँह वह चल हूँ;

दूर तुमसे हूँ अखण्ड सुहागिनी भी हूँ !

आग हूँ जिससे दुलकते बिन्दु हिमजल के;
शून्य हूँ जिसको बिछे हैं पाँवड़े पल के;
पुलक हूँ वह जो पला है कठिन प्रस्तर में;
हूँ वही प्रतिबिम्ब जो आधार के उर में !

नील घन भी हूँ सुनहली दामिनी भी हूँ !

नाश भी हूँ मैं अनन्त विकास का क्रम भी;
त्याग का दिन भी चरम आसक्ति का तम भी;
तार भी आघात भी झङ्कार की गति भी;
पात्र भी मधु भी मधुप भी मधुर विस्मृति भी;

अधर भी हूँ और स्मित की चाँदनी भी हूँ !

११

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

श्यामल श्यामल कोमल कोमल,
लहराता सुरभित केश-पाश !

नभगङ्गा की रजतधार में,
धो आई क्या इन्हे रात ?
कम्पित है तेरे सजल अग,
सिहरा सा तन हे सद्यस्नात !

भीगी अलको के छोरों से
चूतीं बूँदें कर विविध लास !

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

सौरभभीना झीना गीला
लिपटा मृदु अंजन सा दुकूल;
चल अंचल से झर झर झरते
पथ में जुगनू के स्वर्ण-फूल;
दीपक से देता बार बार
तेरा उज्ज्वल चितवन-विलास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

उच्छ्वसित वक्ष पर चपल है
बक-पाँतों का अरविन्द-हार;
तेरी निश्वासें छू भू को
बन बन जातीं मलयज बयार;
केकी-रव की नूपुर-ध्वनि सुन
जगती जगती की मूक प्यास;
रूपसि तेरा घन केश-पाश !

इन स्निग्ध लटों से छा दे तन
पुलकित अंकों में भर विशाल;
झुक स्मित शीतल चुम्बन से
अंकित कर इसका मृदुल भाल;
दुलरा दे ना बहला दे ना
यह तेरा शिशु जग है उदास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

१२

तुम मुझमें प्रिय ! फिर परिचय क्या ।

तारक में छवि प्राणों में स्मृति;
पलकों में नीरव पद की गति;
लघु उर में पुलकों की संसृति;
भर लाई हूँ तेरी चंचल
और करूँ जग मे संचय क्या !

तेरा मुख सहास अरुणोदय;
परछाईं रजनी विषादमय;
यह जागृत वह नींद स्वप्नमय;

खेल खेल थक थक सोने दो
मै समझूँगी सृष्टि प्रलय क्या ।

तेरा अधर-विचुम्बित प्याला
तेरी ही स्मितमिश्रित हाला;
तेरा ही मानस मधुशाला;

फिर पूछूँ क्यों मेरे साकी ।
देते हो मधुमय विषमय क्या ?

रोम रोम में नन्दन पुलकित;
साँस साँस मे जीवन शत शत;
स्वप्न स्वप्न में विश्व अपरिचित;

मुझमें नित बनते मिटते प्रिय !
स्वर्ग मुझे क्या, निष्क्रिय लय क्या !

हारूँ तो खोऊँ अपनापन;
पाऊँ प्रियतम में निर्वासन;
जीत बनूँ तेरा ही बन्धन;

भर लाऊँ सीपी में सागर
प्रिय ! मेरी अब हार विजय क्या !

चित्रित तू मै हूँ रेखाक्रम;
मधुर राग तू मै स्वरसंगम;
तू असीम मैं सीमा का भ्रम;

काया छाया में रहस्यमय !
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या !

१३

बताता जा रे अभिमानी !

कण कण उर्वर करते लोचन;
स्पन्दन भर देता सूनापन;
जग का धन मेरा दुख निधेन;

तेरे वैभव की भिक्षुक या
कहलाऊँ रानी !

बताता जा रे अभिमानी !

दीपक सा जलता अन्तस्तल;
संचित कर आँसू के बादल;
लिपटा है इससे प्रलयानिल;

क्या यह दीप जलेगा तुझसे
भर हिम का पानी ?

बताता जा रे अभिमानी !

चाहा था तुझमें मिटना भर;
दे डाला बनना मिट मिट कर,
यह अभिशाप दिया है या वर;

पहली मिलनकथा हूँ या मै
चिर-विरह कहानी !

बताता जा रे अभिमानी !

१४

मधुर मधुर मेरे दीपक जल !

युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल;
प्रियतम का पथ आलोकित कर !

सौरभ फैला विपुल धूप बन;
मृदुल मोम सा घुल रे मृदु तन;
दे प्रकाश का सिन्धु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल गल !

पुलक पुलक मेरे दीपक जल !

सारे शीतल कोमल नूतन,
माँग रहे तुझसे ज्वाला-कण;
विश्वशलभ सिर धुन कहता 'मैं
हाय न जल पाया तुझमें मिल'!
सिहर सिहर मेरे दीपक जल!

जलते नभ मे देख असंख्यक;
स्नेहहीन नित कितने दीपक;
जलमय सागर का उर जलता;
विद्युत् ले घिरता है बादल!
विहँस विहँस मेरे दीपक जल!

द्रुम के अङ्ग हरित कोमलतम,
ज्वाला को करते हृदयङ्गम;
वसुधा के जड़ अन्तर में भी,
बन्दी है तापों की हलचल!
बिखर बिखर मेरे दीपक जल!

मेरी निश्वासों से द्रुततर,
सुभग न तू बुझने का भय कर;
मै अञ्चल की ओट किये हूँ,
अपनी मृदु पलकों से चञ्चल!
सहज सहज मेरे दीपक जल!

सीमा ही लघुता का बन्धन,
है अनादि तू मत घड़ियाँ गिन,
मैं दृग के अक्षय कोषों से—
तुझमें भरती हूँ आँसू-जल !
सजल सजल मेरे दीपक जल !

तम असीम तेरा प्रकाश चिर,
खेलेंगे नव खेल निरन्तर,
तम के अणु अणु में विद्युत् सा—
अमिट चित्र अंकित करता चल !
सरल सरल मेरे दीपक जल !

तू जल जल जितना होता क्षय,
वह समीप आता छलनामय;
मधुर मिलन मे मिट जाना तू—
उसकी उज्ज्वल स्मित में घुल खिल !
मदिर मदिर मेरे दीपक जल !
प्रियतम का पथ आलोकित कर !

१५

मुखर पिक हौले बोल !
हठीले हौले हौले बोल !
जाग लुटा देंगी मधु कलियाँ मधुप कहेंगे 'और'
चौंक गिरेंगे पीले पल्लव अम्ब चलेंगे मोर,

समीरण मत्त उठेगा डोल !
हठीले हौले हौले बोल !

मर्मर की वंशी में गूँजेगा मधुऋतु का प्यार;
झर जावेगा कम्पित तृण से लघु सपना सुकुमार;

एक लघु आँसू बन बेमोल !
हठीले हौले हौले बोल ।

'आता कौन' नीड़ तज पूछेगा विहगों का रोर;
दिग्वधुओं के घन-घूँघट के चञ्चल होंगे छोर;

पुलक से होंगे सजल कपोल !
हठीले हौले हौले बोल !

प्रिय मेरा निशीथ नीरवता में आता चुपचाप;
मेरे निमिषों से भी नीरव है उसकी पदचाप;

सुभग ! यह पल घड़ियाँ अनमोल !
हठीले हौले हौले बोल !

वह सपना बन बन आता जागृति में जाता लौट;
मेरे श्रवण आज बैठे है इन पलकों की ओट;

व्यर्थ मत कानों में मधु घोल !
हठीले हौले हौले बोल !

भर पावे तो स्वरलहरी में भर वह करुण हिलोर;
मेरा उर तज वह छिपने का ठौर न ढूँढ़े भोर;

उसे बाँधूँ फिर पलकें खोल !
हठीले हौले हौले बोल !

१६

पथ देख बिता दी रैन
मै प्रिय पहचानी नहीं !

तम ने धोया नभपथ
सुवासित हिमजल से;
सूने आँगन में दीप
जला दिये झिलमिल से,

आ प्रात बुझा गया कौन
अपरिचित, जानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

धर कनल-थाल में मेघ
सुनहला पाटल सा,
कर बालारुण का कलश
विहग-रव मङ्गल सा,
आया प्रिय-पथ से प्रात—
सुनाई कहानी नहीं !
मै प्रिय पहचानी नहीं !

नव इन्द्रधनुष सा चीर
महावर अंजन ले,
अलि-गुञ्जित मीलित पंकज—
—नूपुर रुनझुन ले,
फिर आई मनाने साँझ
मैं बेसुध मानी नहीं !
मै प्रिय पहचानी नहीं !

इन श्वासों को इतिहास
आँकते युग बीते,
रोमों में भर भर पुलक
लौटत पल रीते
यह ढुलक रही है याद
नयन से पानी नहीं !
मै प्रिय पहचानी नहीं !

अलि कुहरा सा नभ, विश्व
मिटे बुद्‌बुद्‌-जल सा;
यह दुख का राज्य अनन्त
रहेगा निश्चल सा;

हूँ प्रिय की अमर सुहागिनि
पथ की निशानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

१७

मेरे हँसते अधर नहीं जग—
की आँसू-लड़ियाँ देखो !
मेरे गीले पलक छुओ मत
मुर्झाई कलियाँ देखो !

हँस देता नव इन्द्रधनुष की स्मित में घन मिटता मिटता;
रँग जाता है विश्व राग से निष्फल दिन ढलता ढलता;
कर जाता ससार सुरभिमय एक सुमन झरता झरता,
भर जाता आलोक तिमिर में लघु दीपक बुझता बुझता
मिटनेवालों की हे निष्ठुर !
बेसुध रँगरलियाँ देखो !
मेरे गीले पलक छुओ मत
मुर्झाई कलियाँ देखो !

गल जाता लघु बीज असख्यक नश्वर बीज बनाने को,
तजता पल्लव वृन्त पतन के हेतु नये बिकसाने को,
मिटता लघु पल प्रिय देखो कितने युग कल्प मिटाने को !
भूल गया जग भूल विपुल भूलोमय सृष्टि रचाने को,
मेरे बन्धन आज नहीं प्रिय,
संसृति की कड़ियाँ देखो !
मेरे गीले पलक छुओ मत
मुर्झाई कलियाँ देखो !

श्वासें कहतीं 'आता प्रिय' निश्वास बताते वह जाता,
आँखों ने समझा अनजाना उर कहता चिर यह नाता;
सुधि से सुन 'वह स्वप्न सजीला क्षण क्षण नूतन बन आता';
दुख उलझन में राह न पाता सुख दृगजल में बह जाता,
मुझमें हो तो आज तुम्हीं 'मैं'
बन दुख की घड़ियाँ देखो !
मेर गीले पलक छुओ मत
बिखरी पखुरियाँ देखो !

१८

इस जादूगरनी वीणा पर
गा लेने दो क्षण भर गायक !

पल भर ही गाया चातक ने
रोम रोम में प्यास प्यास भर !
काँप उठा आकुल सा अग जग,
सिहर गया तारोमय अम्बर;
भर आया घन का उर गायक !
गा लेने दो क्षण भर गायक !

क्षण भर ही गाया फूलों ने
दृग में जल अधरों में स्मित धर !
लघु उर के अनन्त सौरभ से
कर डाला यह पथ नन्दन चिर;
पाया चिर जीवन झर गायक !
गा लेने दो क्षण भर गायक !

एक निमिष गाया दीपक ने
ज्वाला का हँस आलिङ्गन कर !
उस लघु पल से गर्वित है तू
लघु रजकण आभा का सागर,
दिव उस पर न्यौछावर गायक !
गा लेने दो क्षण भर गायक !

एक घड़ी गा लूँ प्रिय मैं भी
मधुर वेदना से भर अन्तर !
दुख हो सुखमय सुख हो दुखमय,
उपल बनें पुलकित से निर्झर,
मरु हो जावे उर्वर गायक !
गा लेने दो क्षण भर गायक !

१९

घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !

जलधि-मानस से नव जन्म पा
सुभग तेरे ही दृग-व्योम में;
सजल श्यामल मन्थर मूक सा
तरल अश्रु विनिर्मित गात ले;
नित घिरूँ झर झर मिटूँ प्रिय !
घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !

२०

आ मेरी चिर मिलन-यामिनी !
तममयि ! घिर आ धीरे धीरे,
आज न सज अलकों में हीरे;
चौका दें जग श्वास न सीरे;
हौले झरें शिथिल कवरी में—
गूँथे हरशृङ्गार कामिनी !

हौले डाल पराग-बिछौने;
आज न दे कलियों को रोने;
दे चिर चचल लहरें सोने,

जगा न निद्रित विश्व ढालने
विधु-प्याले से मधुर चाँदनी !

परिमल भर लावे नीरव घन,
गले न मृदु उर आँसू बन बन;
हो न करुण पी पी का क्रन्दन;

अलि, जुगनू के छिन्न हार को
पहिन न बिहँसे चपल दामिनी !

अपलक हैं अलसाये लोचन
मुक्ति बन गए मेरे बन्धन;
है अनन्त अब मेरा लघु क्षण;

रजनि ! न मेरी उरकम्पन से
आज बजेगी विरह-रागिनी !

तम में हो चल छाया का क्षय;
सीमित की असीम में चिर लय;
एक हार में हों शत शत जय

सजनि ! विश्व का कण कण मुझको
आज कहेगा चिर सुहागिनी !

२१

जग ओ मुरली की मतवाली !

दुर्गमपथ हो व्रज की गलियाँ;
शूलों में मधुवन की कलियाँ;
यमुना हो दृग के जलकण में;
वंशी-ध्वनि उर की कम्पन में;

जो तू करुणा का मंगलघट ले
बन आवे गोरसवाली !
जग ओ मुरली की मतवाली !

चरणों पर नवनिधियाँ खेलीं;
पर तूने हँस पहनी सेली;
चिर जाग्रत थी तू दीवानी;
प्रिय की भिक्षुक दुख की रानी;
खारे दृग-जल से सींच सींच
प्रिय की सनेहबेली पाली !
जग ओ मुरली की मतवाली !

कंचन के प्याले का फेनिल;
नीलम सा तम सा हालाहल;
छू तूने कर डाला उज्ज्वल
प्रिय के पदपद्मों का मधुजल;
फिर अपने मृदु कर से छूकर
मधु कर जा यह विष की प्याली !
जग ओ मुरली की मतवाली !

मरुशेष हुआ यह मानससर
गतिहीन मौन दृग के निर्झर;
इस शीत निशा का अन्त नहीं
आता पतझार वसन्त नहीं;
गा तेरे ही पंचम स्वर से
कुसुमित हो यह डाली डाली।
जग ओ मुरली की मतवाली !

२२

कैसे सँदेश प्रिय पहुँचाती !

दृगजल की सित मसि है अक्षय,
मसि प्याली, झरते तारक द्वय,
पल पल के उड़ते पृष्ठों पर,
सुधि से लिख श्वासों के अक्षर;

मैं अपने ही बेसुध पन में
लिखती हूँ कुछ, कुछ लिख जाती !

छायापथ में छाया से चल,
कितने आते जाते प्रतिपल;
लगते उनके विभ्रम इंगित,
क्षण में रहस्य क्षण में परिचित;
मिलता न दूत वह चिर परिचित,
जिसको उर का धन दे आती।

अज्ञातपुलिन से, उज्ज्वलतर,
किरणें प्रवाल तरणी में भर:
तम के नीलम-कूलों पर नित,
जो ले आती ऊषा सस्मित,
वह मेरी करुण कहानी में
मुसकाने अंकित कर जाती।
सज केशरपट तारक बेंदी,
दृग-अंजन मृदु पद में मेंहदी
आती भर मदिरा से गगरी,
सन्ध्या अनुराग सुहागभरी,
मेरे विषाद में वह अपने
मधुरस की बूँदें छलकाती!
डाले नव घन का अवगुण्ठन,
दृग-तारक में सकरुण चितवन
पदध्वनि से सपने जाग्रत कर,
श्वासों से फैला मूक तिमिर,
निशि अभिसारों में आँसू से
मेरी मनुहारें धो जाती।

२३

मैं बनी मधुमास आली !

आज मधुर विषाद की घिर करुण आई यामिनी,
बरस सुधि के इन्दु से छिटकी पुलक की चाँदनी;
उमड़ आई री दृगों में
सजनि कालिन्दी निराली !

रजत-स्वप्नों में उदित अपलक विरल तारावली;
जाग सुख-पिक ने अचानक मदिर पंचम तान ली;
वह चली निश्वास की मृदु
वात मलय-निकुञ्ज-पाली !

सजल रोमों में बिछे हैं पाँवड़े मधुस्नात से;
आज जीवन के निमिष भी दूत हैं अज्ञात से;
क्या न अब प्रिय की बजेगी
मुरलिका मधु-रागवाली !
मै बनी मधुमास आली !

२४

मैं मतवाली इधर, उधर प्रिय मेरा अलबेला सा है !

मेरी आँखों में ढलकर
छवि उसकी मोती बन आई;
उसके घनप्यालों में है
विद्युत् सी मेरी परछाईं;
नभ में उसके दीप, स्नेह
जलता है पर मेरा उनमें;
मेर है यह प्राण, कहानी
पर उसकी हर कम्पन में;

यहाँ स्वप्न की हाट वहाँ अलि छाया का मेला सा है !

उसकी स्मित लुटती रहती
कलियों में मेरे मधुवन की;
उसकी मधुशाला में बिकती
मादकता मेरे मन की;
मेरा दुख का राज्य मधुर
उसकी सुधि के पल रखवाले;
उसका सुख का कोप वेदना—
के मैंने ताले डाले;

वह सौरभ का सिन्धु मधुर जीवन मधु की बेला सा है!

मुझे न जाना अलि! उसने
जाना इन आँखों का पानी;
मैं ने देखा उसे नहीं
पदध्वनि है केवल पहचानी;
मेरे मानस में उसकी स्मृति
भी तो विस्मृति बन आती;
उसके नीरव मन्दिर में
काया भी छाया हो जाती;
क्या यह निर्मम खेल सजनि! उसने मुझसे खेला सा है।

२५

तुमको क्या देखूँ चिर नूतन !

जिसके काले तिल में बिम्बित,
हो जात लघु तृण औ' अम्बर;
निश्चलता मे स्वप्नों से जग,
चंचल हो भर देता सागर !

जिस बिन सब आकार-हीन तम;
देख न पाई मै यह लोचन !

तुमको पहचानूँ क्या सुदर !
जो मेरे सुख दुख से उर्वर
जिसको मैं अपना कह गर्वित;
करता सूनेपन को, पल में,
जड़ का नव कम्पन में कुसुमित;
जो मेरी श्वासों का उद्गम,
जान न पाई अपना ही उर !

तुमको क्या बाँधूँ छायातन !
तरी विरह-निशा जिसका दिन,
जो स्वच्छन्द मुझे है बन्धन;
अणुमय हो बनता जो जगमय,
उड़ते रहना जिसका स्पन्दन;
जीवन जिससे मेरा संगम,
बाँध न पाई अपना चल मन !

तुमको क्या रोकूँ चिर चचल !
जिसका मिट जाना प्रलयङ्कर,
बनना ही सस्मृति का अंकुर;
मेरी पलको का द्रुत कम्पन,
है जिसका उत्थान पतन चिर;
मुझसे जो नव और चिरन्तन,
रोक न पाई मैं वह लघु पल !

२६

प्रिय गया है लौट रात !

सजल धवल अलस चरण,
मूक मदिर मधुर करुण,
चाँदनी है अश्रुस्नात !

सौरभ-मद ढाल शिथिल,
मृदु बिछा प्रवाल वकुल,
सो गई सी चपल वात !

युग युग जल मूक विकल,
पुलकित अब स्नेहतरल,
दीपक है स्वप्नसात !

किसके पदचिह्न विमल,
तारका मे अमिट विरल,
गिन रहे हैं नीर-जात !

किसकी पदचाप चकित,
जग उठे है जन्म अमित
श्वास श्वास में प्रभात !

२७

एक बार आओ इस पथ से

मलय-अनिल बन हे चिरचंचल !

अधरो पर स्मित सी किरणे ले
श्रमकण से चचित सकरुण मुख,
अलसाई है विरह-यामिनी
पथ मे लेकर सपने सुख दुख,
आज सुला दो चिर निद्रा मे,
सुरभित कर इसके चल कुन्तल !

मृदु नभ के उर में छाले से
निष्ठुर प्रहरी से पल पल के,
शलभ न जिन पर मँडरात प्रिय !
भस्म न बनते जा जल जल के,
आज बुझा जाओ अम्बर के
स्नेहहीन यह दीपक झिलमिल !

तम हो तुम हो और विश्व मे
मेरा चिर परिचित सूनापन,
मेरी छाया हो मुझमे लय
छाया में सस्मृति का स्पन्दन,
मैं पाऊँ सौरभ सा जीवन
तेरी निश्वासो मे घुल मिल !

२८

**क्यों** जग कहता मतवाली ?

क्यो न शलभ पर लुट लुट जाऊँ,
झुलसे पङ्खो को चुन लाऊँ,
उन पर दीपशिखा अँकवाऊँ,

अलि ! मैंने जलने ही में जब
जीवन की निधि पा ली !

क्या अनुनय में मनुहारों में,
क्या आँसू मे उद्गारों मे,
आवाहन में अभिसारों में,
जब मैंने अपने प्राणों में
प्रिय की छाँह छिपा ली !

भावे क्या अलि ! अस्थिर मधुदिन,
दो दिन का मृदु मधुकर-गुञ्जन
पल भर का यह मधु-मद-वितरण,
चिर वसन्त है मेरे इस
पतझर की डाली डाली !

जो न हृदय अपना विंधवाऊँ,
निश्वासों क तार बनाऊँ,
ता कह किसका हार बनाऊँ !
तारो न वह दृष्टि, कली न
उनकी हँसी चुरा ली !

मै ने कब देखी मधुशाला ?
कब माँगा मरकत का प्याला ?
कब छलकी विद्रुम सी हाला ?
मैंने तो उनकी स्मित में
केवल आँखे धो डालीं !
क्यों जग कहता मतवाला ?

२९

जाने किसकी स्मित रूम झूम,
जाता कलियों को चूम चूम !

उनके लघु उर में जग, अलसित,
सौरभ-शिशु चल देता विस्मित;
होले मृदु पद से डोल डाल,
मृदु पखुरियों के द्वार खोल !

कुम्हला जाती कलिका अजान;
वह सुरभित करता विश्व, घूम !

जाने किसकी छबि रूम झूम,
जाती मेघों को चूम चूम !
वे मन्थर जल के बिन्दु चकित,
नभ का तज दुल पड़ते विचलित !
विद्युत क दीपक ले चंचल,
सागर सा गर्जन कर निष्फल,
घन थकते उनको खोज खोज,
फिर मिट जाते ज्यों विफल धूम !

जाने किसकी ध्वनि रूम झूम,
जाती अचलों को चूम चूम !
उनक जड़ जीवन मे संचित,
सपन बनते निर्झर पुलकित;
प्रस्तर के अणु घुल घुल अधीर,
उसमें भरते नव स्नेह-नीर !
वह बह चलता अज्ञात देश,
प्यासा में भरता प्राण, झूम !

जाने किसकी सुधि रूम झूम,
जाती पलकों को चूम चूम !
उरकोषों के मोती अविदित,
बन पिघल पिघल कर तरल रजत,
भरते आँखों में बार बार
रोके न आज रुकते अपार;
मिटते ही जाते हैं प्रतिपल
इन धूलिकणों के चरण चूम !

३०

तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

कम्पित कम्पित,
पुलकित पुलकित,
परछाईं मेरी से चित्रित,

रहने दो रज का मंजु मुकुर,
इस विन शृंगार-सदन सूना !
तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

सपने औ' स्मित,
जिसमें अंकित,
सुख दुख के डोरों से निर्मित;
अपनेपन की अवगुण्ठन विन
मेरा अपलक आनन सूना !
तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

जिनका चुम्बन,
चौकाता मन;
बेसुधपन में भरता जीवन,
भूलों के शूलों विन नूतन,
उर का कुसुमित उपवन सूना !
तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

दृग-पुलिनों पर,
हिम से मृदुतर,
करुणा की लहरों मे बह कर,
जो आ जाते मोती, उन विन,
नवनिधियोंमय जीवन सूना !
तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

जिसका रोदन,
जिसकी किलकन,
मुखरित कर देते सूनापन,
इन मिलन-विरह-शिशुओं क विन
विस्तृत जग का आँगन सूना !
तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

३१

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

उसमें हँस दी मेरी छाया;
मुझमें रो दी ममता माया;
अश्रुहास ने विश्व सजाया;

रहे खेलते आँखमिचौनी
प्रिय ! जिसके परदे में 'मैं' 'तुम' ?

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

अपने दो आकार बनाने;
दोनों का अभिसार दिखाने;
भूलों का संसार बसाने;

जो झिलमिल झिलमिल सा तुमने
हँस हँस दे डाला था निरुपम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

कैसा पतझर कैसा सावन;
कैसी मिलन विरह की उलझन;
कैसा पल घड़ियामय जीवन;

कैसे निशिदिन कैसे सुख दुख
आज विश्व में तुम हो या तम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

किसमें देख सँवारूँ कुन्तल;
अङ्गराग पुलकों का मल मल;
सपनों से आँजूँ पलकें चल;

किस पर रीझूँ किससे रूठूँ
भर लूँ किस छबि से अन्तरतम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

आज कहाँ मेरा अपनापन !
तेरे छिपने का अवगुण्ठन;
मेरा बन्धन तेरा साधन;

तुम मुझमे अपना सुख देखो
मैं तुममें अपना दुख प्रियतम !
टूट गया वह दर्पण निर्मम !

३२

ओ विभावरी !

चाँदनी का अंगराग;
माँग में सजा पराग;
रश्मितार बाँध मृदुल
चिकुर-भार री !
आ विभावरी !

अनिल घूम देश देश;
लाया प्रिय का सँदेश,
मोतियों के सुमन-कोष,
वार वार री !
ओ विभावरी !

लेकर मृदु ऊर्म्मबीन;
कुछ मधुर करुण नवीन;
प्रिय की पदचाप-मदिर
गा मलार री !
ओ विभावरी !

बहने दे तिमिर भार,
बुझने दे यह अंगार,
पहिन सुरभि का दुकूल
वकुलहार री !
ओ विभावरी !

३३

प्रिय ! जिसने दुख पाला हो !

जिन प्राणों से लिपटी हो
पीड़ा सुरभित चन्दन सी;
तूफानों की छाया हो
जिसकी प्रिय-आलिङ्गन सी;
जिसको जीवन की हारें
हों जय के अभिनन्दन सी;

वर दो यह मेरा आँसू
उसके उर की माला हो !

जो उजियाला देता हो
जल जल अपनी ज्वाला मे;
अपना सुख बाँट दिया हो
जिसने इस मधुशाला में,
हँस हालाहल ढाला हो
अपनी मधु सी हाला में;
मेरी साधों से निर्मित
उन अधरों का प्याला हो !

३४

दीपक में पतङ्ग जलता क्यों ?

प्रिय की आभा में जीता फिर
दूरी का अभिनय करता क्यों ?
पागल रे पतङ्ग जलता क्यों ?

उजियाला जिसका दीपक में,
तुझमें भी है वह चिनगारी;
अपनी ज्वाला देख, अन्य की
ज्वाला पर इतनी ममता क्यों ?

गिरता कब दीपक, दीपक में,
तारक मे तारक कब घुलता;
तेरा ही उन्माद शिखा में
जलता है फिर आकुलता क्यों ?

पाता जड़ जीवन, जीवन से,
तम दिन में मिल दिन हो जाता;
पर जीवन के, आभा के कण,
एक सदा, भ्रम मे फिरता क्यों ?

जो तू जलने को पागल हो,
आँसू का जल स्नेह बनेगा;
धूमहीन निस्पन्द जगत में
जल चुझ, यह क्रन्दन करता क्यों ?
दीपक में पतङ्ग जलता क्यों ?

२५

आँसू का मोल न लूँगी मै !

यह क्षण क्या ? द्रुत मेरा स्पन्दन;
यह रज क्या ? नव मेरा मृदु तन;
यह जग क्या ? लघु मेरा दर्पण;
प्रिय तुम क्या ? चिर मेरे जीवन;
मेरे सब सब में प्रिय तुम,
किससे व्यापार करूँगी मै ?
आँसू का मोल न लूँगी मै !

निर्जल हो जाने दो बादल;
मधु से रीते सुमनों के दल;
करुणा विन जगती का अञ्चल;
मधुर व्यथा विन जीवन के पल;

मेरे दृग में अक्षय जल,
रहने दो विश्व भरूँगी मै !
आँसू का मोल न लूँगी मैं !

मिथ्या प्रिय मेरा अवगुण्ठन !
पाप शाप, मेरा भोलापन !
चरम सत्य, यह सुधि का दंशन;
अन्तहीन, मेरा करुणा-कण;

युग युग के बंधन को प्रिय !
पल में हँस 'मुक्ति' करूँगी मैं !
आँसू का मोल न लूँगी मै !

३२

कमलदल पर किरण अंकित
चित्र हूँ मै क्या चितेरे ?

बादलों की प्यालियाँ भर
चाँदनी के सार से;
तूलिका कर इन्द्रधनु
तुमने रँगा उर प्यार से;

काल के लघु अश्रु से
धुल जायँगे क्या रङ्ग मेरे ?

तड़ित् सुधि में, वेदना मे
करुण पावस-रात भी;
आँक स्वप्नो में दिया
तुमने वसन्त-प्रभात भी;

क्या शिरीष-प्रसून से
कुम्हलायँगे यह साज मेरे ?

है युगो का मूक परिचय
देश से इस राह से,
हो गई सुरभित यहाँ की
रेणु मेरी चाह से;

नाश के निश्वास से
मिट पायेगे क्या चिह्न मेरे ?

नाच उठते निमिष पल
मेरे चरण की चाप से;
नाप ली नि.सीमता
मैने दृगों के माप से;

मृत्यु के उर में समा क्या
पायँगे अब प्राण मेरे ?

आँक दी जग के हृदय मे
अमिट मेरी प्यास क्यों ?
अश्रुमय अवसाद क्यों यह
पुलककम्पन-लास क्यों ?
मैं मिटूँगी क्या अमर
हो जायँगे उपहार मेरे ?

२७

प्रिय ! मैं हूँ एक पहेली भी !

जितना मधु जितना मधुर हास,
जितना मद तेरी चितवन में;
जितना क्रन्दन जितना विषाद,
जितना विष जग के स्पन्दन में;

पी पी मैं चिर दुखप्यास बनी
सुखसरिता की रँगरेली भी !

मेरे प्रतिरोमों से अविरत,
झरते हैं निर्झर और आग;
करतीं विरक्ति आसक्ति प्यार,
मेरे श्वासों में जाग जाग;
प्रिय मैं सीमा की गोद पली
पर हूँ असीम से खेली भी !

३८

**क्या** नई मेरी कहानी !

विश्व का कण कण सुनाता
प्रिय वही गाथा पुरानी !

सजल बादल का हृदय-कण,
चू पड़ा जब पिघल भू पर;
पी गया उसको अपरिचित
तृषित दृरका पङ्क का उर;
मिट गई उससे तड़ित् सी
हाय वारिद की निशानी !
करुण वह मेरी कहानी !

जन्म से मृदु कंज-उर मे
नित्य पाकर प्यार लालन;
अनिल के चल पङ्ख पर फिर
उड़ गया जब गन्ध उन्मन,

बन गया तब सर अपरिचित
हो गई कलिका बिरानी !
निठुर वह मेरी कहानी !

चीर गिरि का कठिन मानस
बह गया जो स्नेहनिर्झर;
ले लिया उसको अतिथि कह,
जलधि ने जब अङ्क मे भर,

वह सुधा सा मधुर पल मे
हो गया तब क्षार पानी !
अमिट वह मेरी कहानी !

३९

मधुवेला है आज
अरे तू जीवन-पाटल फूल !

आई दुख की रात मोतियों की देने जयमाल;
सुख की मन्द वतास खोलती पलकें दे दे ताल;

डर मत रे सुकुमार !
तुझे दुलराने आये शूल !
अरे तू जीवन-पाटल फूल !

भिक्षुक सा यह विश्व खड़ा है पाने करुणा प्यार;
हँस उठ रे नादान खोल दे पंखुरियों के द्वार;

रीते कर ले कोप

नहीं कल सोना होगा धूल !

अरे तू जीवन-पाटल फूल !

४८

यह पतझर मधुवन भी हो।

दुःख सा तुषार सोता हो
बेसुध सा जब उपवन में;
उस पर छलका देती हो
वनश्री मधु भर चितवन में;
शूलों का दंशन भी हो
कलियों का चुम्बन भी हो।

सूखे पल्लव फिरते हों
कहने जब करुण कहानी,
मारुत परिमल का आसन
नभ दे नयनों का पानी;
जब अलिकुल का क्रन्दन हो
पिक का कलकूजन भी हो।

जब संध्या ने आँसू में
अंजन से हो मसि घोली,
तब प्राची के अंचल में
हो स्मित से चर्चित रोली;
काली अपलक रजनी में
दिन का उन्मीलन भी हो!

जब पलकें गढ़ लेती हो
स्वाती के जल बिन मोती;
अधरों पर स्मित की रेखा
हो आकर उनको धोती;
निर्मम निदाघ में मेरे
करुणा का नव घन भी हो

४१

मुस्काता संकेतभरा नभ
अलि क्या प्रिय आनेवाले है ?

विद्युत् के चल स्वर्णपाश में बँध हँस देता रोता जलधर,
अपने मृदु मानस की ज्वाला गीतों से नहलाता सागर;
दिन निशि को, देती निशि दिन को
कनक-रजत के मधु-प्याले है !
अलि क्या प्रिय आनेवाले है ?

माती बिखरातीं नूपुर के छिप तारक-परियाँ नर्तन कर;
हिमकण पर आता जाता मलयानिल परिमल से अञ्जलि भर;
भ्रान्त पथिक से फिर फिर आते
विस्मित पल क्षण मतवाले है !
अलि क्या प्रिय आनेवाले है ?

सघन वेदना के तम में, सुधि जाती सुख सोने के कण भर;
सुरधनु नव रचतीं निश्वासें, स्मित का इन भीगे अधरों पर;
आज आँसुओं के कोपों पर
स्वप्न बने पहरेवाले है !
अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

नयन श्रवणमय श्रवण नयनमय आज हो रहे कैसी उलझन !
रोम रोम में होता री सखि एक नया उर का सा स्पन्दन !
पुलकों से भर फूल बन गये
जितने प्राणों के छाले है !
अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

४८

झरते नित लोचन मेरे हो।

जलती जो युग युग से उज्ज्वल,
आभा से रच रच मुक्ताहल;
वह तारक-माला उनकी,
चल विद्युत् के कङ्कण मेरे हो।
झरते निज लोचन मेरे हो।

ले ले तरल रजत औ' कंचन,
निशिदिन ने लीपा जो आँगन;

वह सुषमामय नभ उनका,
पल पल मिटते नव घन मेरे हों।
झरते नित लोचन मेरे हों।

पद्मराग-कलियों से विकसित;
नीलम के अलियों से मुखरित.

चिर सुरभित नन्दन उनका,
यह अश्रु भार-नत तृण मेरे हों।
झरते नित लोचन मेरे हो।

तम सा नीरव नभ सा विस्तृत;
हास रुदन से दूर अपरिचित;

वह सूनापन हो उनका,
यह सुखदुखमय स्पन्दन मेरे हो।
झरते नित लोचन मेरे हों।

जिसमे कसक न सुधि का दंशन,
प्रिय मे मिट जाने के साधन,

वे निर्वाण—मुक्ति उनके,
जीवन के शत बन्धन मेरे हों!
झरते नित लोचन मेरे हो।

बुद्‌बुद् में आवर्त्त अपरिमित;
कण मे शत जीवन परिवर्तित;

हो चिर सृष्टि प्रलय उनके,
बनने मिटने के क्षण मेरे हो
झरते नित लोचन मेरे हो !

स्मित पुलकित नित परिमलमय;
इन्द्रधनुष सा नवरङ्गोमय;

अग जग उनका कण कण उनका,
पलभर वे निर्मम हों।
झरते निज लोचन मेरे हो !

४३

लाये कौन संदेश नये घन !

अम्बर गर्वित,
हो आया नत,
चिर निस्पन्द हृदय में उसके उमड़े री पुलकों के सावन !
लाये कौन सँदेश नये घन !

चौंकी निद्रित,
रजनी अलसित,
श्यामल पुलकित कम्पित कर मे दमक उठे विद्युत् के कंकण !
लाये कौन सँदेश नये घन !

दिशि का चंचल,
परिमल-अंचल,
छिन्नहार से बिखर पड़े सखि सखि ! जुगनू के लघु हीरक के कण !
लाय कौन सँदेश नये घन !

जड़ जग स्पन्दित,
निश्चिल कम्पित,
फूट पड़े अवनी के संचित सपने मृदुतम अंकुर बन बन !
लाये कौन सँदेश नये घन !

रोया चातक,
सकुचाया पिक,
मत्त मयूरी ने सूने मे झड़ियो का दुहराया नर्तन !
लाये कौन सँदेश नये घन !

सुख दुख से भर,
आया लघु उर,
मोती से उजले जलकण से छाये मेरे विस्मित लोचन !
लाय कौन सँदेश नये घन !

४४

कहता जग दुख को प्यार न कर !

अनबींधे मोती यह दृग के,
बँध पाये बन्धन में किसके ?

पल पल बनते पल पल मिटते,
तू निष्फल गुथ गुथ हार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

किसने निज को खोकर पाया ?
किसने पहचानी वह छाया ?

तू भ्रम वह तम तेरा प्रियतम
आ सूने मे अभिसार न कर !
कहता जग दुख को प्यार न कर !

यह मधुर कसक तेरे उर की,
कंचन की और न हीरक की;

मेरी स्मित से इसका विनिमय
कर ले या चल व्यापार न कर !
कहता जग दुख को प्यार न कर !

दर्पणमय है अणु अणु मेरा;
प्रतिबिम्बित रोम रोम तेरा;

अपनी प्रतिछाया से भोले !
इतनी अनुनय मनुहार न कर !
कहता जग दुख को प्यार न कर !

सुखमधु में क्या दुख का मिश्रण !
दुखविष में क्या सुख-मिश्री-कण !

जाना कलियों के देश तुझे
तो शूलों से शृंगार न कर !
कहता जग दुख को प्यार न कर !

४५

मत अरुण घूँघट खोल री !

वृन्त बिन नभ में खिले जो;
अश्रु बरसाते हँसे जो;
तारकों के वे सुमन
मत चयन कर अनमोल री !

तरल सोने से धुलीं यह;
पद्मरागों में सजीं यह;
उलझ अलकें जायँगी
मत अनिलपथ में डोल री!

निशि गई मोती सजाकर;
हाट फूलों में लगाकर;
लाज में गल जायँगे
मत पूछ इनसे मोल री!

स्वर्ण-कुमकुम में बसा कर,
है रँगी नव मेघ चूनर,
बिछल मत धुल जायगी
इन लहरियों में लोल री!

चाँदनी की मिस सुधा भर,
बाँटता इनसे सुधाकर,
मत कली की प्यालियों में
लाल मदिरा घोल री!

पलक सीपे नींद का जल.
स्वप्नमुक्ता रच रहे, मिल;
है न विनिमय के लिए
स्मित में इन्हें मत तोल री!

खेल सुख दुख में चपल थक,
सो गया जगशिशु अचानक;
जाग मचलेगा न तू
कल खग पिकों में बोल री!

४६

जग करुण करुण, मैं मधुर मधुर !

दोनों मिल कर देते रजकण,
चिर करुण मधुर सुन्दर सुन्दर !

जग पतझर का नीरव रसाल,
पहने हिमजल की अश्रुमाल;
मैं पिक बन गाती डाल डाल,

सुन फूट फूट उठते पल पल,
सुख-दुख-मञ्जरियों के अङ्कुर !

विस्मृति-शशि के हिमकिरण-बाण,
करते जीवन-सर मूकप्राण,
बन मलयपवन चढ़ रश्मियान,
मै आती ले मधु का सँदेश,
भरने नीरव उर में मर्मर !

यह नियति-तिमिर-सागर अपार,
बुझते जिसमें तारक-अँगार;
मैं प्रथम रश्मि सी कर शृंगार,
आ अपनी छबि से ज्योतिर्मय,
कर देती उसकी लहर लहर !

युग से थी प्रिय की मूक बीन,
थे तार शिथिल कम्पनविहीन,
मैने द्रुत उनकी नींद छीन,
सूनापन कर डाला क्षण में
नव झङ्कारों से करुणमधुर !
जग करुण करुण, मै मधुर मधुर !

४७

प्राणपिक प्रिय-नाम रे कह !

मैं मिटी निस्सीम प्रिय में;
वह गया बँध लघु हृदय में;

अब विरह की रात को तू
चिर मिलन का प्रात रे कह !

दुखअतिथि का धो चरणतल,
विश्व रसमय कर रहा जल;

यह नहीं क्रन्दन हठीले !
सजल पावसमास रे कह !

ले गया जिसको लुभा दिन,
लौटती वह स्वप्न बन बन;

है न मेरी नींद, जागृति
का इसे उत्पात रे कह !

एक प्रिय-दृग श्यामता सा;
दूसरा स्मित की विभा सा;

यह नहीं निशिदिन इन्हें
प्रिय का मधुर उपहार रे कह !

श्वास से स्पन्दन रहे झ ,
लोचनों से रिस रहा उर;

दान क्या प्रिय ने दिया
निर्वाण का वरदान रे कह !

चल क्षणों का क्षणिक सचय;
बालुका से बिन्दु-परिचय;

कह न जीवन तू इसे
प्रिय का निठुर उपहास रे कह !

४८

तुम दुख बन इस पथ से आना !

शूलों में नित मृदु पाटल सा,
खिलने देना मेरा जीवन,

क्या हार बनेगा वह जिसने सीखा न हृदय को बिंधवाना !

वह सौरभ हूँ मै जो उड़कर;
कलिका में लौट नहीं पाता;
पर कलिका के नाते ही प्रिय जिसको जग ने सौरभ जाना !

नित जलता रहने दो तिल तिल,
अपनी ज्वाला में उर मेरा,
इसकी विभूति में, फिर आकर अपने पद-चिह्न बना जाना !

वर देते हो तो कर दो ना,
चिर आँखमिचौनी यह अपनी,
जीवन में खोज तुम्हारी है मिटना ही तुमको छू पाना !

प्रिय ! तेरे उर में जग जावे,
प्रतिध्वनि जब मेरे पी पी की;
उसको जग समझे बादल मे विद्युत् का बन बन मिट जाना !

तुम चुपके से आ बस जाओ,
सुखदुख सपनों में श्वासों में;
पर मन कह देगा यह वे है आँखे कह देगी पहचाना !

जड़ जग के अणुओं में स्मित से,
तुमने प्रिय जब डाला जीवन,
मेरी आँखों ने सोच उन्हे सिखलाया हँसना खिल जाना !

कुहरा जैसे घन आतप मे,
यह संसृति मुझमें लय होगी;
अपने रागों से लघु वीणा मेरी मत आज जगा जाना !
तुम दुख बन इस पथ से आना !

४९

अलि वरदान मेरे नयन

उमड़ता भव-अतल सागर,
लहर लेते सुख सरोवर;
चाहते पर अश्रु का लघु
बिन्दु प्यासे नयन
प्रिय घनश्याम चातक नयन!

पी उजाला तिमिर पल में,
फेंकता रविपात्र जल में,
तब पिलाते स्नेह अणु अणु-
को छलकते नयन!
दुग्धमद के चषक यह नयन!

छू अरुण का किरणचामर;
बुझ गये नभ-दीप निर्भर,
जल रहे अविराम पथ में
किन्तु निश्चल नयन!
तममय विरह दीपक नयन!

उलझते नित बुद्बुदे शत,
घेरते आवर्त्त आ द्रुत,
पर न रहता लेश, प्रिय की
स्मित रँगे यह नयन!
जीवन-सरित-सरसिज नयन!

मैं मिटूँ ज्यों मिट गया घन;
उर मिटे ज्यों तड़ित्-कम्पन;
फूट कण कण से प्रकट हो
किन्तु अगणित नयन!
प्रिय के स्नेह-अङ्कुर नयन!
अलि वरदान मेरे नयन!

५०

दूर घर मै पथ से अनजान !
मेरी ही चितवन से उमड़ा तम का पारावार;
मेरी आशा के नव अङ्कुर शूलों में साकार;
पुलिन सिकतामय मेरे प्राण !

मेरी निश्वासों से बहती रहती झञ्झावात;
आँसू में दिनरात प्रलय के घन करते उत्पात;
कसक में विद्युत् अन्तर्धान !

मेरी ही प्रतिध्वनि करती पल पल मेरा उपहास;
मेरी पदध्वनि में होता नित औरों का आभास,
नहीं मुझसे मेरी पहचान !

दुख में जाग उठा अपनेपन का सोता संसार;
सुख में सोई री प्रिय-सुधि की अस्फुट सी झङ्कार,
हो गये सुखदुख एक समान !

बिन्दु बिन्दु ढुलने से भरता उर में सिन्धु महान;
तिल तिल मिटने से होता है चिर जीवन निर्माण;
न सुलझी यह उलझन नादान !

पल पल के झरने से बनता युग का अद्भुत हार;
श्वास श्वास खोकर जग करता नित दिव से व्यापार;
यही अभिशाप यही वरदान !

इस पथ का कण कण आकर्षण, तृण तृण में अपनाव;
उसमें मूक पहेली है पर इसमें अमिट दुराव;
हृदय को बन्धन में अभिमान !
दूर घर मैं पथ से अनजान !

५१

**क्या** पूजा क्या अर्चन रे ?

उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे !
मेरी श्वासें करती रहतीं नित प्रिय का अभिनन्दन रे !
पदरज को धोने उमड़े आते लोचन में जल-कण रे !
अक्षत पुलकित रोम, मधुर मेरी पीड़ा का चन्दन रे !
स्नेहभरा जलता है झिलमिल मेरा यह दीपक-मन रे !
मेरे दृग के तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे !
धूप बने उड़ते जाते है प्रतिपल मेरे स्पन्दन रे !
प्रिय प्रिय जपते अधर ताल देता पलकों का नर्तन रे !

५२

प्रिय सुधि भूले री मै पथ भूली !

मेरे ही मृदु उर मे हँस बस,
श्वासो मे भर मादक मधु-रस,
लघु कलिका के चल परिमल से
वे नभ छाये री मै वन फूली !

प्रिय सुधि भूले री मै पथ भूली !

तज उनका गिरि सा गुरु अन्तर,
मै सिकता-कण सी आई झर;
आज सजनि उनसे परिचय क्या !
वे घनचुम्बित मै पथ-धूली !
प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

उनकी वीणा की नव कम्पन,
डाल गई री मुझमें जीवन;
खोज न पाई उसका पथ मैं
प्रतिध्वनि सी सूने मे झूली !
प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

५३

जाग बेसुध जाग !

अश्रुकण से उर सजाया त्याग हीरक-हार;
भीख दुख की माँगने फिर जो गया प्रतिद्वार;
शूल जिसने फूल छू चन्दन किया, सन्ताप;
सुन जगाती है उसी सिद्धार्थ की पद-चाप;

करुणा के दुलारे जाग !

शङ्ख में ले नाश मुरली में छिपा वरदान,
दृष्टि में जीवन अधर में सृष्टि ले छबिमान;
आ रचा जिसने स्वरों में प्यार का संसार,
गूँजती प्रतिध्वनि उसी की फिर क्षितिज के पार;

वृन्दाविपिनवाले जाग !

× × × ×

रात के पथहीन तम मे मधुर जिसके श्वास,
फैल भरते लघु कणों में भी असीम सुवास;
कंटको की सेज जिसकी आँसुओ का ताज,
सुभग ! हँस उठ, उस प्रफुल्ल गुलाब हा सा आज,

बीती रजनि प्यारे जाग !

५४

लय गीत मदिर, गति ताल अमर,
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर।
आलोकतिमिर सितअसित चीर,
सागर-गर्जन रुनझुन मंजीर;
उड़ता झंझा में अलक-जाल;
मेघों में मुखरित किंकिणि-स्वर।
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर।

रविशशि तेरे अवतंस लोल;
सीमन्त-जटित तारक अमोल;

चपला विभ्रम, स्मित इन्द्रधनुष.
हिमकण वन झरते स्वेदनिकर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

युग है पलकों का उन्मीलन
स्पन्दन में अगणित लय जीवन;

तेरी श्वासों में नाच नाच
उठता वसुधा जग सचराचर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

तेरी प्रतिध्वनि बनती मधुदिन;
तेरी समीपता पावस-क्षण,

रूपसि ! छूते ही तुझमें मिट
जड़ पा लेता वरदान अमर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

जड़ कण कण के प्याले झलमल;
छलकी जीवनमदिरा छलछल,

पीती थक झुक झुक झूम झूम;
तू घूँट घूँट फेनिल शीकर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

बिखराती जाती तू सहास;
नव तन्मयता उल्लास लास;

हर अणु कहता उपहार बनूँ
पहले छू लूँ जो मृदुल अधर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

हे सृष्टिप्रलय के आलिङ्गन !
सीमा असीम के मूक मिलन !

कहता है तुझको कौन घोर
तू चिर रहस्यमयि कोमलतर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

तेरे हित जलते दीप-प्राण;
खिलते प्रसून हँसते विहान;

श्यामाङ्गिनि ! तेरे कौतुक को
बनता जग मिट मिट सुन्दरतर !
प्रिय-प्रेयसि ! तेरा लास अमर !

५५

उर तिमिरमय घर तिमिरमय
चल सजनि दीपक बार ले !

राह में रो रो गये हैं
रात और विहान तेरे;
काँच स टूटे पड़े यह
स्वप्न, भूलें, मान तेरे;

फूलप्रिय पथ शूलमय
पलकें बिछा सुकुमार ले !

तृषित जीवन में घिरे घन –
बन, उड़े जो श्वास उर से,
पलकसीपी में हुए मुक्ता
सुकोमल और बरसे;

मिट रहे नित धूलि में
तू गूँथ इनका हार ले!

मिलनवेला में अलस तू
सो गई कुछ जाग कर जब,
फिर गया वह, स्वप्न में
मुस्कान अपनी आँक कर तब!

आ रही प्रतिध्वनि वही फिर
नींद का उपहार ले!

चल सजनि दीपक बार ले!

५६

तुम सो जाओ मैं गाऊँ!

मुझको सोते युग बीते,
तुमको यों लोरी गाते;

अब आओ मैं पलकों में
स्वप्नों से सेज बिछाऊँ!

प्रिय ! तेरे नभमन्दिर के
मणिदीपक बुझ बुझ जाते;

जिनका कण कण विद्युत् है
मै ऐसे प्राण जलाऊँ !

क्यों जीवन के शूलों में
प्रतिक्षण आते जाते हो ?

ठहरो सुकुमार ! गलाकर
मोती पथ मे फैलाऊँ !

पथ की रज में है अंकित,
तेरे पदचिह्न अपरिचित;

मैं क्यों न इसे अञ्जन कर
आँखों में आज बसाऊँ ।

जल सौरभ फैलाता उर,
तब स्मृति जलती है तेरी;

लोचन कर पानी पानी
मै क्यो न उसे सिंचवाऊँ ।

इन भूलों मे मिल जातीं,
कलियाँ तेरी माला की

मैं क्यों न इन्हीं काँटों का
संचय जग को दे जाऊँ !

अपनी असीमता देखो,
लघु दर्पण में पल भर तुम;
मै क्यो न यहाँ क्षण क्षण को
धो धो कर मुकुर बनाऊँ !

हँसने मे छू जाते तुम
रोने मे वह सुधि आती;
मै क्यो न जगा अणु अणु को
हँसना रोना सिखलाऊँ !

५७

जागो बेसुध रात नहीं यह !

भीगीं मानस के दुखजल से;
भीनी उड़ते सुखपरिमल से;

हैं बिखरे उर की निश्वासें,
मादक मलय-वतास नहीं यह !

पारद के मोती से चञ्चल,
मिटते जो प्रतिपल बन ढुल ढुल,

हैं पलकों में करुणा के अणु,
पाटल पर हिमहास नहीं यह !

कूलहीन तम के अन्तर में,
दमक गईं छिप जो क्षण भर में,

है विषाद में बिखरी स्मृतियाँ,
घनचपला का लास नहीं यह !

श्रमकण से ले, ढुलने हीरक
अञ्चल से ढक आशा-दीपक

तुम्हें जगाने आई पीड़ा,
स्वप्नों का परिहास नहीं यह !

५८

केवल जीवन का क्षण मेरे !

फिर क्यों प्रिय मुझको अग जग का प्यासा कण कण घेरे !

नत घन विद्युत् माँग रहे पल, अम्बर फैलाये नित अञ्चल;
उसको माँग रहे हँस रोकर कितने रात सवेरे !

कलियाँ रोती है सौरभ भर, निर्झर मानस आँसू मय कर,
इस क्षण के हित मत्त समीरण करता शत शत फेरे !

तारे बुझते हैं जल निशिभर, स्नेह नया लाते भर फिर फिर,
सागर की लहरो लहरो में करती प्यास बसेरे !

लुटता इस पर मधुप पद परिमल, झर जाते गल कर मुक्ताहल,
किसको दूँ किसको लौटाऊँ, लघु पल ही धन मेरे !